मैत्री प्रभु-मंदिर का द्वार

मैत्री भाव का अर्थ है कि कोई दूसरा नहीं है। और दूसरा तब तक रहेगा जब तक मैं हूं, क्योंकि दूसरा सिर्फ मेरे 'मैं' की रिएक्शन है, उसकी प्रतिक्रिया है। जब तक 'मैं हूं', तब तक 'तू है।' जिस दिन 'मैं' नहीं है उस दिन कोई 'तू' न रहा। जिस दिन कोई 'तू' न रहा उस दिन जो भाव जन्मेगा उस भाव का नाम है मैत्री, उसका नाम है फ्रेंडलीनेस। और जब कोई पराया न रहा, जब कोई अन्य न रहा, दि अदर, वह दूसरा न रहा, तब मैं किस तरह जीऊंगा? तब मैं किस तरह जीऊंगा—तब किसी रोते हुए आदमी के आंसू क्या मेरे आंसू नहीं हो जाएंगे? तब किसी आदमी की हंसती हुई मुस्कुराहट क्या मेरी मुस्कुराहट नहीं हो जाएगी? तब खिला हुआ फूल क्या मेरी खिली हुई आत्मा नहीं हो जाएगी? तब सागर की गरजती हुई लहरें क्या मेरा गर्जन न बन जाएंगी?

जब मैं नहीं हूं और तू नहीं है तो फिर जो रह गया वह सब एक है। और तब सक्रिय होती है करुणा। जब एक ही शेष रह गया, तब जो सक्रियता जीवन में पैदा होती है, तब मैं जो करता हूं, तब वह सभी कुछ मैत्रीपूर्ण है। तब जो भी मैं हूं—मेरा उठना-बैठा, मेरी श्वास, वह सभी मैत्रीपूर्ण है। तब जीवन के सारे दुख मेरे हैं और सारे सुख भी। तब जीवन के सारे आंसू मेरे हैं और सारी मुस्कुराहटें भी। तब जीवन और मैं एक हूं। वैसा जो तादात्म्य है, वैसा जो अद्वैत भाव है, उस अद्वैत भाव का नाम है मैत्री। इसलिए मैत्री दूसरा द्वार है।

कैसे पहुंचेंगे इस मैत्री के जगत तक? कैसे उठेंगे इस मित्रत्व में? कैसे उठेंगे इस एकता में? कैसे यह अद्वैत फलित होगा? कैसे तोड़ेंगे अपने को? तीन बातें ध्यान में रहें तो यह टूटना हो सकता है।

पहली बात, इस बात की अथक खोज चाहिए कि मैं हूं? इस बात की अथक खोज चाहिए—मैं हूं? मेरा कोई अलग होना है? मैं कोई अलग-थलग, कोई जीवन से टूटा हुआ, कोई खंड, कोई पृथकता है कहीं मेरे होने में—या कि एक अपृथक अस्तित्व है, एक इंटीग्रेटेड एग्जिस्टेंस है?

मैं श्वास ले रहा हूं, लेकिन श्वास तो मेरी नहीं है। यह जो चारों तरफ भरा हुआ श्वास का सागर है, ये जो हवाएं हैं, उनसे श्वास मुझ तक आती है और जाती है। अगर हवाएं बंद हो जाएं, इनकार कर दें कि बस बहुत हो गया, अब नहीं आदमियों से संबंध रखना है; तो मैं और आप तत्क्षण यहीं शून्य हो जाएंगे। जीवन विलीन हो जाएगा।

सूरज की किरणें आ रही हैं, बहुत लंबी यात्रा करके हम तक आती हैं, कोई आठ-नौ करोड़ मील दूर से। सूरज तय कर ले कि बस हो जाओ ठंडे, बहुत दिन हो गए! बहुत दिन हो गए और ठंडा हो जाए वहीं अभी; तो हमें पता भी नहीं चलेगा कि सूरज ठंडा हो गया है। क्योंकि उसके ठंडे होते ही हम भी ठंडे हो जाएंगे। वह जो ये दूर से आती हुई किरणें यहां गिर रही हैं आपके ऊपर, यह नौ करोड़ मील दूर से जीवन बरस रहा है। नौ करोड़ मील दूर से जीवन के सूत्र और धागे बंधे हैं। ये किरणें धागे हैं जीवन के। ये किरणें बंद और हम समाप्त! लेकिन हम कहे चले जाते हैं कि मैं हूं।

नहीं, मैं नहीं हूं। हवाएं हैं, सूरज है, पृथ्वी है, सब कुछ है—मैं कहां हूं! इन सबका अदभुत जोड़ है, इन सबका एक क्रास प्वाइंट है। इन सबसे मिल कर एक रूपाकृति है। उस रूपाकृति को यह भ्रम है कि मैं हूं।

व्यक्ति कहीं भी नहीं है। अनंत जीवन की ऊर्जा और शक्तियां कटती हैं और व्यक्ति निर्मित होता है। यह जो व्यक्ति अहंकार है, यह जो ईगो-सेंटर है, यह जो खयाल है कि मैं हूं, इसकी खोज करनी जरूरी है कि मैं हूं।

एक वृक्ष के पत्ते से हम पूछें, वह कहेगा कि मैं हूं, जरूर मैं हूं। उससे हम पूछें कि तुम्हारे पास की शाखा पर लगे हुए दूसरे पत्ते? वह कहेगा कि दूसरे हैं। क्योंकि उस पत्ते को कैसे पता हो सकता है कि बगल की पड़ोस में लगी शाखा पर जो पत्ते आए हैं वे उस रस-स्रोत से आए हैं जिससे मैं आया हूं। मेरे प्राणों के धागे उसी शाखा से जुड़े हैं जिससे उनके प्राणों के धागे भी जुड़े हैं। हमारे प्राण एक ही ऊर्जा से निष्पन्न हुए हैं, प्रकट हुए हैं। एक पत्ते को कैसे पता चल सकता है?

लेकिन हम चूंकि बाहर खड़े हैं, हमें दिखाई पड़ता है कि पागल है यह पत्ता बहुत, कहता है कि मैं हूं और वह पत्ता दूसरा है और दोनों एक ही वृक्ष के पत्ते हैं। हम वृक्ष की शाखा से पूछें कि यह पड़ोस की शाखा? वह कहेगी, होगी कोई। हमेशा इससे डर लगा रहता है, न मालूम कैसी शत्रुता कर दे, न मालूम क्या कर दे। होगी कोई, मैं और हूं। शाखाओं को क्या पता हो सकता है? एक ही पेड़ से वे बंधी हैं। वृक्ष को हम पूछें कि यह जो पड़ोस में खड़ा हुआ वृक्ष है? वह कहेगा, है दूसरा, है शत्रु। लेकिन उस वृक्ष को क्या पता कि दोनों की जड़ें एक ही पृथ्वी से जुड़ी हैं और एक ही प्राण से संयुक्त हैं। और पृथ्वी

को हम पूछें कि तुम? पृथ्वी भी कहेगी, मैं हूं, और ये चांद-तारे, और ग्रह-नक्षत्र होंगे दूसरे। लेकिन पृथ्वी को भी कैसे पता हो कि सारे चांद-तारे और सारे ग्रह-नक्षत्र किसी एक ही जीवन-ऊर्जा से संयुक्त हैं।

सारा जीवन एक से संयुक्त है। उस एक का नाम ही प्रभु है। और उस एक की तरफ जाने के लिए मैत्री दूसरा द्वार है, क्योंकि वह एकता में प्रवेश है। उस एक का नाम परमात्मा है और उस एकता की तरफ जो सबसे बड़ा कदम है वह है फ्रेंडलीनेस, वह है मैत्री। लेकिन मैत्री घटित होगी जब हम मैं को खोजने जाएंगे और पाएंगे कि 'मैं नहीं'। एक बात।

दूसरी बात : इसे केवल सोच लेना काफी नहीं है। आदमी अच्छी-अच्छी बातें सोच सकता है। सोच लेना पर्याप्त नहीं है, अनुभव से गुजरना भी जरूरी है। तो मैत्री सिर्फ एक फिलॉसफिक कंसेप्ट, एक दार्शनिक धारणा नहीं है। एक अनुभव, एक एक्सपीरिएंस, एक अनुभूति है।

तो जब यह लगे कि मैं नहीं हूं तो इसके थोड़े प्रयोग करने जरूरी हैं।

किसी वृक्ष के पास टिक कर बैठ गए हैं और तब यह अनुभव करना जरूरी है कि मैं नहीं हूं। और मैं आपसे कहता हूं कि किसी घड़ी में आपको लगेगा कि आप और वृक्ष एक हैं। सागर के तट पर बैठ कर यह अनुभव करना कि मैं नहीं हूं। और एकदम से हैरानी की धारा आएगी एक, और लगेगा कि मैं एक लहर हूं, लहर का गर्जन हूं। किसी फूल के पास बैठ कर यह अनुभव करना कि मैं नहीं हूं। और लगेगा कि भीतर कब फूल छा गया सारी आत्मा पर, रह गया फूल और मैं नहीं हूं! किसी व्यक्ति का हाथ हाथ में लेकर अनुभव करना कि मैं नहीं हूं। और पता चलेगा कि दोनों हाथ दो नहीं रहे, जुड़ गए कहीं किसी तल पर और एक रह गया है।

विचार के तल पर जानना है कि 'मैं नहीं हूं' और अनुभव के तल पर अनुभव करना है कि 'मैं नहीं हूं' ताकि वह जोड़ एक जीवंत प्रतीति बन जाए। जीवन के चारों तरफ के विस्तार से जगह-जगह अनुभव करना है कि 'मैं नहीं हूं।'

भाव इतनी तीव्र एकता में ले जा सकता है! ट सोच ही नहीं लेना है, उसके प्रयोग करने हैं जीवन में कि वह गहरे में प्रविष्ट हो जाए और वहां पता चले। तब, तब एक बार पता चलेगा कि यह जो जीवन में सब तरफ घट रहा है, यह हमसे जुड़ा है; सिर्फ हमने मैत्री का संबंध नहीं जोड़ा है इसलिए धागे बीच में से कट गए हैं, एक दीवाल खड़ी हो गई है; अन्यथा जीवन बह रहा है, जा रहा है, आ रहा है! सारा जीवन एक है—मैत्री का दूसरा अनुभव।

और तीसरी बात : न केवल विचार पर्याप्त हैं, न केवल अनुभव; बल्कि तीसरी बात मैत्री के अनुभव का सक्रिय प्रकाशन। मैत्री का सक्रिय जीवन। उठते-बैठते, चलते-फिरते मैत्री का सक्रिय जीवन।

क्या अर्थ है मैत्री के सक्रिय जीवन का? धार्मिक जीवन उसी का नाम है। वह जो रिलीजस, धार्मिक जीवन जिसे कहें, वह मैत्री का जीवन है। मेरे कृत्य, मेरे विचार में, मेरे अनुभव में और मेरे कृत्य में मैत्री प्रविष्ट हो। मैं जो करूं वह मैत्री-प्रेरित हो। मैं जो करूं उसका एक ही आधार और एक ही कारण हो कि वह मैत्री है पीछे—मैं जीऊं तो मैत्री के लिए, मरूं तो मैत्री के लिए। मेरी श्वास उसके लिए चले, मेरा हृदय उसके लिए धड़के—सक्रिय मैत्री का तीसरा चरण।

चारों तरफ जीवन में कितना दुख है, कितनी पीड़ा है, कितनी चिंता है। चारों तरफ जीवन कितना कुरूप है, चारों तरफ जीवन कितना विकलांग है, चारों तरफ जीवन कितना पक्षाघात से घिरा है, चारों तरफ कितने घाव हैं, चारों तरफ कितनी पीड़ा का विस्तार है। मेरी मैत्री सक्रिय होनी चाहिए। एक छोटा सा घाव भी भर सकूं, एक छोटी सी पीड़ा दूर कर सकूं, एक छोटा सा कांटा किसी रास्ते से उठा सकूं, किसी मार्ग से एक पत्थर हटा सकूं, किसी के जीवन में एक सीढ़ी बना सकूं-कुछ भी जो मैं कर सकूं चारों तरफ के जीवन के लिए। मैत्री मेरी सक्रिय होनी चाहिए। तो मुझे मैत्री का उन तीनों आयामों में पूरा का पूरा, उनके तीनों डायमेंशन में मैत्री की ऊंचाई में, गहराई में, चौड़ाई में मेरा अनुभव होगा।

विचार में, अनुभव में, अभिव्यक्ति में जीवन की छोटी सी पीड़ा भी मैं दूर कर सकूं। नाम गिनाने की जरूरत नहीं है। हम सब जीवन की पीड़ाएं जानते हैं। चारों तरफ जीवन पीड़ा से भरा हुआ है। कोई बहुत बड़ा उपक्रम करने का भी सवाल नहीं है, क्योंकि एक छोटा सा गेस्चर, एक छोटा सा इशारा, आंख की एक मुस्कुराहट, किसी का हंस कर के स्वागत भी किसी की गहरी से गहरी पीड़ा को उतार दे सकता है। किसी को हाथ का छोटा सा स्पर्श भी न मालूम कितनी घनी पीड़ा का भार उतार दे सकता है। लेकिन हम मुस्कुराना भूल गए हैं। हमारी आंखों ने प्रेम बरसाना छोड़ दिया है। हमारे हाथों में वह पुलक नहीं उठती, हमारे प्राणों में वह गीत पैदा नहीं होता। वह हमें खयाल ही भूल गया है। हम पत्थर की तरह जी रहे हैं।

इस जीवन को चौबीस घंटे निरंतर उठने से सोने तक, चारों तरफ की पीड़ाओं का दर्शन करना है और चारों तरफ की पीड़ा से संवेदित होना है, चारों तरफ की पीड़ा से पीड़ित होना है। चारों तरफ के दुख और कांटों को प्रतीत करना है और जो बन सके प्रत्येक व्यक्ति से उन कांटों और उन पीड़ाओं को दूर करने का उपाय करना है—तो मैत्री सक्रिय बनती है।

जीवन है चारों तरफ बहुत दुख और पीड़ा से भरा हुआ। उसमें मैत्री के संस्करण, उसमें मैत्री की अभिव्यक्ति प्रकट होती रहनी चाहिए। और वह प्रत्येक व्यक्ति को अपने लिए चुनना होता है कि उसकी मैत्री किन-किन मार्गों से प्रकट हो और बहे।

तो ये तीन बातें मैत्री के संबंध में स्मरण रखनी जरूरी हैं। फिर से मैं दोहरा दूं, करुणा है निराकार। वह है आकाश में छा गया बादल जो पानी से भरा है। मैत्री है वर्षा, जो आ गई पृथ्वी तक और फैल गई पृथ्वी की जड़ों में। करुणा है भाव, मैत्री है क्रिया। करुणा है आत्मा, मैत्री है शरीर। करुणा भीतर जन्मती है, वह है केंद्र; मैत्री है अभिव्यक्ति, वह है परिधि। जिसकी करुणा मैत्री तक पहुंच जाती है वह भगवान के दूसरे द्वार में प्रविष्ट हो जाता है।

— ओशो
ध्यान-विज्ञान